जयसेनाचार्य की टीका। अलौकिक टीका है, सारे जैनदर्शन का मक्खन-सार भरा है।

यहाँ क्या चलता है ? किस भाव से मोक्ष होता है, यह बात चलती है। आत्मा वस्तु है, ज्ञानानन्द ध्रुवस्वरूप (है) और पर्याय में अशुद्धता है तो उस आत्मा को-पाँच भाव है, पाँच भाव; उसमें परमपारिणामिकभाव तो त्रिकाली ध्रुव अविनाशी वस्तु है। समझ में आया ? यह आगे कहेंगे, वह निष्क्रिय है, भाई ! सिद्धान्त में निष्क्रिय की गाथा निकलती है। पंचास्तिकाय में टीका में (गाथा है)। यह सिद्धान्त में पारिणामिकभाव को निष्क्रिय कहा है। पंचास्तिकाय की गाथा की टीका। जयसेनाचार्य की टीका में श्लोक है। 'निष्क्रियो पारिणामिकः' भगवान आत्मा ध्रुवस्वरूप जो निष्क्रिय है, उसमें परिणति अर्थात् पर्याय अर्थात् अवस्था की क्रिया नहीं है; अतः वह मोक्ष का कारण नहीं। समझ में आया ? तो मोक्ष का कारण कौन है ? - यह बात यहाँ आचार्य सिद्ध करके लोगों को कहते हैं।

सुन भैया ! पाँच भाव में पारिणामिकभाव जो त्रिकाली है, वह तो शुद्ध ध्रुव है। अब पारिणामिक के जो तीन भेद लिये थे - अशुद्धपारिणामिक के तीन बोल, जो दस प्राण, पाँच इन्द्रिय लिए तो है पारिणामिक में। उसको पाँच इन्द्रिय-भावेन्द्रिय, हों और वीर्य, मन, वचन, काया के कम्पन में जो वीर्य है, वह वीर्य यहाँ, कम्पन का दूसरा, ऐसा दस प्राणरूप जीवत्व वह अशुद्ध पारिणामिकभाव। पारिणामिक, उसे पारिणामिक कहा। लो, अशुद्धभाव में तो कर्म की निमित्तता आती है परन्तु ऐसा यहाँ नहीं गिनने में आया। वह दस प्राणरूप की पर्याय, पाँच इन्द्रिय, मन, वचन और श्वास तथा आयुष्य की योग्यतारूप जो अन्दर परिणमन है, वह अशुद्ध पारिणामिकभाव का भेद है। समझ में आया ? और भव्यत्व तथा अभव्यत्व, ये तीन बोल जो तत्त्वार्थसूत्र में लिये हैं, वे तीनों अशुद्ध पारिणामिकभाव का कथन है। उसमें त्रिकाली जीवनशक्ति भगवान पारिणामिकभाव स्वभावरूप, वह तो

त्रिकाली ध्रुव है। समझ में आया ? वह ध्येय करनेयोग्य है परन्तु मोक्ष की पर्याय और मोक्ष का कारणभाव, वह उसमें नहीं है। समझ में आया ?

आगे कहेंगे, ध्येय तो है यह त्रिकाल भगवान ध्रुवस्वरूप, ज्ञान का दल। समझ में आया ? जैसे दर्पण में... शीशा, दर्पण को शीशा कहते हैं न ? उसकी पर्याय वर्तमान में स्वच्छता के कारण अग्नि, बर्फ आदि दिखते हैं, वह अग्नि, बर्फ नहीं है। वह तो दर्पण की वर्तमान स्वच्छ अवस्था है परन्तु उस अवस्था के पीछे दर्पण का जो दल पड़ा है, वह मूल चीज़ दर्पण की है। समझ में आया ? इसी तरह आत्मा में जो पर्याय चलती है-रागादि या क्षयोपशम आदि, एक समय की पर्याय को यहाँ पारिणामिक में गिनने में आया है। अशुद्ध पारिणामिक में गिनने में आया है।

उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक वास्तव में तो पारिणामिक की पर्याय है परन्तु यहाँ कहते हैं कि किस भाव से मोक्ष होता है ? तो पहले तीन को अशुद्ध पारिणामिक गिनकर, अब भव्यत्व का क्या हुआ - यह बात है। अभव्य का तो कभी मोक्ष होता नहीं; इसलिए उसकी बात छोड़ दी। अब त्रिकाली जीवत्व शक्ति जो ध्रुव.. ध्रुव.. है, वह तो निष्क्रिय है, उसमें परिणमन नहीं। अत: सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का परिणमन है, वह किसे होता है ? भव्य जीवों को होता है। समझ में आया ? तो अभी तक क्यों नहीं हुआ ? तो उसका घातक कौन है ? निमित्तरूप से (घातक कौन है ?), यह बात करते हैं।

देखो, **उन तीनों में,...** तीसरे पृष्ठ की पहली लाईन। **उन तीनों में,...** उन तीनों में अर्थात् दस प्राणरूप जीवत्व और भव्यत्व-अभव्यत्व, इन तीनों में। **भव्यत्वलक्षण पारिणामिक को तो...** गाथा सूक्ष्म है। मूल चीज़ है। आचार्य ने जंगल में रहकर ऐसा अमृत शास्त्र बनाया है। समझ में आया ? शास्त्र का बहुमान... वे हैं न वे सिक्ख, सिक्ख लोग, ग्रन्थ साहिब (कहते हैं) उनका ग्रन्थ आवे तो खड़े हो जाते हैं - ऐसा बहुमान। ग्रन्थ साहिब कहते हैं। यह तो महा अध्यात्म ग्रन्थ साहिब है। समझ में आया ? यह तो उसमें क्या बात है, ठीक समझने की चीज़ है। यह तो अलौकिक बात है। परमेश्वर के मुख से निकली हुई दिव्यध्वनि का यहाँ सार इस गाथा में जो रचना की है।

कहते हैं, भव्यत्व-जो तीन बोल में जो भव्यत्व है - ऐसा पारिणामिक को तो

यथासम्भव सम्यक्त्वादि जीवगुणों का... गुण शब्द से यहाँ पर्याय लेना है। सम्यग्दर्शन की पर्याय, सम्यग्ज्ञान की अवस्था और सम्यक्चारित्र जो आनन्दरूप अनुभव है, वह मोक्ष का मार्ग है। समझ में आया? तो मोक्ष के मार्ग में घातरूप निमित्त कौन है? समझ में आया? आत्मा का-आनन्द का अनुभव होना, आनन्द का-सुख का स्वाद आना... समझ में आया? उसका नाम अनुभूति और उसका नाम मोक्ष का मार्ग है। उस आनन्द के अनुभवरूपी सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की शान्ति, उस सम्यक्त्व आदि जीव पर्याय का घातक; गुण का तो कोई घातक है नहीं, गुण तो त्रिकाली है। समझ में आया? द्रव्य और गुण तो त्रिकाली है, वे तो निष्क्रिय हैं, वह तो कह दिया परन्तु उसकी पर्याय में-अवस्था में-सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र जो आनन्द की दशा है, अपने निज घर के आनन्द का अनुभव है। समझ में आया? वह मोक्ष का मार्ग, उसका घातक... घातक तो यहाँ निमित्त से कहना है। घात तो, अपने स्वभावसन्मुख की अनुभव गति नहीं करते तो इस कारण से अपनी निर्मल पर्याय, मिथ्यात्व में रुक गयी है। समझ में आया? तो उस मिथ्यात्व में रुकी है तो उसमें निमित्त कौन है? कि **'देशघाती' और 'सर्वघाती' - ऐसे नामोंवाला मोहादिकर्मसामान्य...** है?

मुमुक्षु : हो गया?

पूज्य गुरुदेवश्री : हो गया, क्या हो गया? ऐसा कि घाती हो गया - ऐसा कहते हैं। सेठ! पहले से कहा न, कि यह व्यवहारनय का कथन है क्योंकि अपनी पर्याय निर्मल प्रगट क्यों नहीं हुई? तो अपना लक्ष्य न करने से जो प्रगट नहीं हुई तो उसमें पर का लक्ष्य हुआ, तो उसमें घात करने की प्रकृति दर्शनमोह, चारित्रमोह की प्रकृति जड़ है, उस निमित्त पर लक्ष्य करने से अपनी वीतरागी पर्याय का घात होता है। समझ में आया?

यथासम्भव... समकित, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन **जीव गुणों का घातक देशघाति;** समकितमोहनीय आदि है, वह देशघाति है और मिथ्यात्वमोहनीय है, वह सर्वघाति है और चारित्र में भी अनन्तानुबन्धी आदि है, वह सर्वघाति है और संज्वलन आदि कषाय है, वह देशघाति है। समझ में आया? देश से अंश में घात में निमित्त हो, और सर्वघात में निमित्त हो, उस प्रकृति को देशघाति और सर्वघाति कहने में आता है। तो कहते हैं कि

भव्यत्वलक्षण पारिणामिक को तो यथासम्भव... उसके योग्य ऐसा। **यथासम्भव सम्यक्त्वादि...** जीव के आनन्द की-शान्ति की पर्याय, वीतरागी आनन्द के स्वाद की दशा, ऐसी पर्याय को घातरूप देशघाति। समझ में आया? केवलज्ञानावरणीय और केवल दर्शनावरणीय भी सर्वघाति है और उसका चार ज्ञान और तीन अज्ञान आदि, दर्शन है, वह देशघाति है। वह तो अपनी पर्याय में केवलज्ञान नहीं, केवलदर्शन नहीं तो उसके घात में निमित्त कौन? कि केवलज्ञानावरणीय, केवलदर्शनावरणीय निमित्त है। समझ में आया? और अपने में सम्यग्दर्शन की पर्याय नहीं तो उसमें-विपरीत पर्याय में निमित्त है? विपरीत पर्याय आत्मा करता है। अपने आनन्द का ख्याल छोड़कर पर में सुख मानता है, राग में-पुण्य में (सुख मानता है), यह मान्यता मिथ्यात्वभाव है। समझ में आया? इस मिथ्यात्वभाव में निमित्तपना कौन है? मिथ्यात्व प्रकृति, वह सर्वघाति है, यह सिद्ध किया। समझ में आया?

यहाँ कहना है कि भव्यत्व पारिणामिकभाव है। भाई! फिर पारिणामिकभाव को घात में निमित्त लिया। पर्याय तो अपनी है, अपने से, परन्तु निमित्त है घातिकर्म और देशघाति को निमित्त कहने में आया। यह इसमें बताया। **ऐसे नामोंवाला मोहादिकर्म...** मोहादिकर्म, मोह अर्थात् मिथ्यात्व मोह, चारित्रमोह, आदि में केवलज्ञानावरणीय, केवलदर्शनावरणीय आदि; मति ज्ञानादि इत्यादि ऐसे (मोहादिकर्म) **सामान्य पर्यायार्थिकनय से ढँकता है,...** क्या कहते हैं? वस्तु तो त्रिकाल है, उसमें तो ढँकना-खुलना कुछ है नहीं। भगवान चैतन्य आनन्दबिम्ब प्रभु अतीन्द्रिय आनन्द का-सुख का सागर आत्मा पड़ा है। लो, सेठ! यह सागर, तुम्हारा सागर नहीं। आहा..हा..!

अतीन्द्रिय भगवान आत्मा जीवत्वशक्ति में जो परम आनन्द त्रिकाल पड़ा है, उसकी दृष्टि नहीं करने से, उसमें जो दु:ख की पर्याय उत्पन्न होती है, उसमें घाति आदि कर्म निमित्त कहने में आते हैं। वह परद्रव्य घात नहीं करता। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य की पर्याय को घात नहीं करता परन्तु यहाँ तो कथन समझाना है तो क्या कहे? अल्पभाषा में जो भाव कहना है तो ऐसे कह सकते हैं। ऐसा लम्बा-लम्बा करने जाये-अपनी पर्याय में अपने दोष से स्व का आश्रय न लेकर पर का आश्रय करते हैं तो मिथ्यात्व होता है, उसमें कर्म निमित्त पड़ते हैं—ऐसी लम्बी-लम्बी बात न करके संक्षिप्त की है। सेठ!

मुमुक्षु : बराबर, बहुत लम्बा व्याख्यान पड़ा।

पूज्य गुरुदेवश्री : लम्बा-लम्बा हो जाये, संक्षेप में उसे कहना हो तो इस प्रकार से ही कह सकते हैं, दूसरे प्रकार से नहीं कह सकते।

कहते हैं, **ऐसे नामोंवाला मोहादिकर्मसामान्य...** उसके अन्तर्भेद बहुत होते हैं। सामान्य रीति से मोहकर्म, ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय—ऐसे सामान्य रीति से कहने में आते हैं। उसके अन्तर्भेद ले लेना।

पर्यायार्थिकनय से ढँकता है, ऐसा जानना।... यह क्या कहते हैं? अपनी भव्यत्वशक्ति में आनन्द का अनुभव होना चाहिए, उसकी योग्यता तो वह है, परन्तु उस आनन्द का अनुभव नहीं, अर्थात् सम्यग्दर्शन नहीं तो उस सम्यग्दर्शन में घातरूप क्या चीज़ है? कि उस पर्यायार्थिकनय से-अवस्थादृष्टि से घात किया जाता है, वस्तु में कोई घात करता है - ऐसा है नहीं। पर्यायार्थिकदृष्टि से। पर्याय में-अवस्था में घात होता है। समझ में आया? गजब बातें भाई! आहा..हा..! **पर्यायार्थिकनय से ढकता है-ऐसा जानना।** ऐसा जानना - यह कहते हैं। तो उस जोरवाला कहता है, देखो भैया! मोहादिकर्म पर्यायार्थिकनय से ढँकता है - ऐसा मानना। जाओ।

मुमुक्षु : स्पष्ट लिखा है।

पूज्य गुरुदेवश्री : स्पष्ट लिखा है न? स्पष्ट लिखा है परन्तु किस नय का कथन है, वह समझना चाहिए या नहीं? प्रत्येक गाथा में पाँच बोल लिये थे पहले। प्रत्येक गाथा में शास्त्र में ऐसा चला है (कि) प्रत्येक गाथा का शब्दार्थ करना, नयार्थ करना कि यह निश्चय का कथन है या व्यवहार का। स्वद्रव्य का आश्रय हो तो निश्चय; परद्रव्य का आश्रय हो तो व्यवहार-नयार्थ। आगमार्थ-आगम का भाव यह है और अन्यमति का भाव, उसमें विरोध यह है - ऐसा करके तात्पर्य निकालना। प्रत्येक गाथा में तात्पर्य निकालना और प्रत्येक गाथा में पाँच बोल लेना। समझ में आया? फुरसत किसको? ऐसा निर्णय करने की फुरसत (कहाँ है)? यह पाप का धन्धा करना। वकील! वकील का धन्धा क्या है? पाप।

मुमुक्षु : नवराश अर्थात् क्या?

पूज्य गुरुदेवश्री : फुरसत, फुरसत नहीं फुरसत। आहा..हा..!

मुमुक्षु : धर्म की फुरसत नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं; उसके लिए-पाप के लिए फुरसत है। चौबीस घण्टे रात-दिन अज्ञान... तो कहते हैं कि राग-द्वेष और अज्ञान तो जीव करता है। उसमें कर्म निमित्त है। वह कर्म निमित्त, पर्याय को घातता है अथवा पर्याय में घात अपने से होता है, उसमें निमित्त पड़ता है। पर्याय के साथ निमित्त-निमित्त सम्बन्ध है; द्रव्य-गुण के साथ कर्म की पर्याय का निमित्त का सम्बन्ध है नहीं - ऐसा सिद्ध करना है। समझ में आया? यह समझाये छे काईं - यह हमारी काठियावाड़ी-गुजराती भाषा है। समझ में आता है - यह तुम्हारी (हिन्दी भाषा है)। आहा..हा..!

कहते हैं कि भव्यत्वशक्ति में तो मोक्षमार्ग होने की योग्यता है परन्तु वह मोक्षमार्ग कहते हैं कि भव्यत्व पारिणामिकभाव में क्यों नहीं हुआ? समझ में आया? वह तो अपने भव्यत्वकारण की योग्यता प्रगट नहीं करने से हुआ परन्तु यहाँ कर्म का निमित्त बताना है। **ऐसा जानना...** और कोई ऐसा कहे कि भव्यत्व तो पारिणामिकभाव से है, उसमें कर्म का-निमित्त का घात-बात कहाँ से आया? हें? प्रश्न है? समझ में आया? उसको तो पारिणामिकभाव कहा है। एक ओर पारिणामिकभाव में पर की अपेक्षा है नहीं परन्तु वह तो यहाँ पारिणामिकभाव है, उसका तो घात नहीं करते परन्तु उसकी जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की पर्याय है, उसका घात करते हैं तो यह भव्यत्व की शक्ति की व्यक्तता का घात करते हैं - ऐसा कहने में आता है। आहा..हा..! समझ में आया?

वहाँ जब... यह बात अनादि की भूल बतायी। अनादि से भगवान अपनी चीज़ को, आनन्दकन्द प्रभु, अतीन्द्रिय आनन्द का सरोबर... समझ में आया? वह नाम आयेगा, वे नाम हैं ६५? द्रव्यसंग्रह में ६५ नाम हैं। ये दो नाम इसमें दिये हैं। ६५ हैं उनमें से। उसमें एक हंस लिया है। परमहंस, भगवान आत्मा अपने आनन्द सरोवर में अन्तर एकाग्र होकर, राग को भिन्न करके, हंस होता है हंस, वह पानी / जल और दूध इकट्ठे मिले हुए हैं तो उसकी-हंस की चोंच में खटास होती है; ऐसी चोंच छुए, दूध और जल दोनों भिन्न हो जाते हैं। वैसे भगवान आत्मा अपना आनन्द सरोवर जो अन्दर में भरा है, वह राग और विकल्प के दु:खरूप दशा है, उससे भिन्न करके हंस अपनी निर्मल आनन्द का अनुभव करे, उसे

हंस कहते हैं। बाकी कौआ कहते हैं। कौआ कहते हैं, क्या कहते हैं ? कौवा, कौवा कहते हैं न ? समझ में आया ?

यहाँ कहते हैं **कालादि लब्धि के वश, भव्यत्वशक्ति की व्यक्ति होती है...** भाषा देखो ! भव्यत्वशक्ति जो त्रिकाल है, उसमें आनन्द और परमानन्द होने की ही शक्ति है। उसमें अपनी पर्याय में विपरीतदशा करता है तो उसे घातिकर्म आदि निमित्त कहे जाते हैं। अब जब कालादि लब्धि अपना पुरुषार्थ। कालादि लब्धि एक बोल नहीं लिया। जब पुरुषार्थ का-धर्म का स्वकाल प्राप्त हो और उसके आदि अर्थात् भाव भी प्राप्त हो आनन्द की दशा का भाव। समझ में आया ? और उस समय कर्म का भी उस प्रकार का अभाव हो, भवितव्यता भी उस प्रकार की उस समय में हो और पुरुषार्थ भी उस समय में स्वभाव सन्मुख का हो। पाँचों समवाय (आ गये)। समझ में आया ? **कालादि लब्धि के वश...** देखो ! कितने ही इनकार करते हैं कि काललब्धि नहीं होती - ऐसा कहते हैं। अभी तो वे रतनचन्दजी यहाँ तो कहते हैं। उस समय में आनन्द की प्राप्ति होने का काल है तो पुरुषार्थ भी अपना स्वसन्मुख हुआ है। समझ में आया ? और उसी समय भवितव्यता और आनन्द की पर्याय प्राप्त होने की ही भवितव्यता उसमें थी और उसी समय दर्शनमोह आदि का अभाव उसके (कर्म) के कारण अभाव होने का ही था। समझ में आया ? स्वभाव तो है ही अपना आनन्द।

यह स्वभाव प्रभु स्वभाव का दल पड़ा है, उसकी सन्मुखता करके, काललब्धि, भावलब्धि वह प्राप्ति करने का सम्यग्दर्शन-ज्ञान आदि, ऐसे **कालादिलब्धि के वश,** उसके आधीन होकर, अपने पुरुषार्थ की ओर काललब्धि के आधीन होकर... अकेली काललब्धि नहीं। समझ में आया ? अपना भगवान आनन्दस्वरूप प्रभु, आनन्द का दल, अतीन्द्रिय आनन्द का स्वयंभूरमण समुद्र-ऐसे आनन्द में हंस राग से, पुण्य से, विकल्प से, भिन्न करके अपना अनुभव करे, उसका नाम यहाँ आनन्द की लब्धि के वश भव्यत्वशक्ति की व्यक्ति कहने में आता है। आहा..हा..! शक्ति की व्यक्तता, प्रगटता। जो भव्यत्वशक्ति है, वह अपने स्वभावरूप है। अब अन्तर का अनुभव करके कालादि और भाव अन्तरस्वरूप के सावधान होकर... समझ में आया ? टोडरमलजी ने तो लिया है कि कालादिलब्धि कोई वस्तु नहीं है। लिया है ? नौवें अधिकार में (लिया है)। समझ में आया ?

मुमुक्षु : जिस काल में होना, वही काललब्धि।

पूज्य गुरुदेवश्री : वही काललब्धि। जिस समय में अपने पुरुषार्थ से जो कार्य होनेवाला है, वह काललब्धि। समझ में आया?

यह प्रश्न तो हमारे पहले ८३ के साल से बहुत चलता है न? ८३-८३। ८० और ३, कितने वर्ष हुए? ४३ वर्ष हुए। १७+२६ एक गृहस्थ था उसके साथ बहुत चर्चा चलती थी। उसे वाँचन बहुत था, उसका ऐसा वाँचन नहीं। तो काल में होता है, अमुक से होता है.. अब कहा काल में होता है क्या? सुन तो सही! टोडरमलजी कहते हैं कि काललब्धि कोई वस्तु नहीं। तो उसने कहा-टोडरमल क्या केवली हो गया? भाई! ऐसा कहा। ४३ वर्ष पहले की बात है। ४० और ३। यह क्या कहते हैं?

मुमुक्षु : वह तो आपको पहले से ही मिले।

पूज्य गुरुदेवश्री : पहले से ही मिले थे। सिरपच्ची में। समझ में आया? पचास-पचास वर्ष पहले, हों! यह सब बातें चलती थीं कि हाँ, काल में होगा, काल में होगा, कर्म कर्म का उसका बहुत जोर था। कर्म हटे तो आत्मा को सम्यग्दर्शन होता है - ऐसा मानते थे परन्तु कर्म कैसे हटे, कहा? अपने स्वभाव का पुरुषार्थ करे तो कर्म हटे ही पड़े हैं। समझ में आया? उसकी भी श्रद्धा का ठिकाना नहीं। कर्म हटे, कर्म तो जड़ हैं। आता है या नहीं?

कर्म विचारै कौन भूल मेरी अधिकायी
अग्नि सहै घनघात लोह की संगति पायी॥

अग्नि पर घन पड़ता है। यदि अग्नि अकेली पृथक् हो तो नहीं पड़ता परन्तु लोहे में प्रवेश करती है तो घन पड़ते हैं। इसी प्रकार अकेला आत्मा, कर्म का राग का निमित्त का सम्बन्ध न करे तो उसे दुःख का घन सहन नहीं करना पड़ता। संग करे-कर्म का संग करे; संग करे स्वयं, हों! वह तो आता है न समयसार में? '**परसंग एव**' बन्ध अधिकार, हाँ! **परसंग एव** - कलश आता है न तो क्या कहते हैं देखो! **परसंग एव**-पर का संग, परन्तु पर का संग करता है तो होता है या पर-जड़ संग करा देता है? समझ में आया? यह कलश है न उसमें? (१७५ कलश)।

यहाँ कहते हैं शुद्धपारिणामिकभाव... उस **कालादिलब्धि के वश भव्यत्वशक्ति**

की व्यक्तता होती है... अपने निजानन्द भगवान में जहाँ दृष्टि पड़ी और उसका जहाँ ज्ञेय ज्ञान में, स्ववस्तु को ज्ञेय बनाया तो उस समय में भव्यत्वशक्ति की व्यक्ति होती है, सम्यग्दर्शन-ज्ञान और आनन्द प्रगट होता है। समझ में आया? उसका नाम मोक्षमार्ग है - ऐसा आगे भाव में कहेंगे। **कालादिलब्धि के वश, भव्यत्वशक्ति की व्यक्ति होती है...** अन्दर में तो आनन्दस्वरूप भगवान पड़ा ही है। आनन्द कहीं बाहर से लाना नहीं है। बाहर में कहीं है नहीं।

मुमुक्षु : कालादि के बाद पुरुषार्थ नहीं लिखा है।

पूज्य गुरुदेवश्री : कालादि के पश्चात् पुरुषार्थ आ गया या नहीं? काल-आदि है या अकेला काल है?

मुमुक्षु : आदि में पुरुषार्थ आ गया।

पूज्य गुरुदेवश्री : काल, भाव, स्वभाव, पर्याय में भाव हुआ, स्वभाव त्रिकाली है, कर्म का अभाव है, उस समय में ऐसा कर्म का अभाव होता ही है। समझ में आया?

एक समय में पाँचों समवाय साथ ही होते हैं। आहा..हा..! टोडरमलजी ने लिखा है - एक कारण नहीं है। एक कारण के साथ सब कारण होते ही हैं। आहा..हा..! ऐसी गड़बड़ हो गयी है न? कर्म के ऊपर डालते हैं। कर्म के कारण हमें भटकना पड़ता है (-ऐसा लोग कहते हैं)। समझ में आया?

मुमुक्षु : काल का दोष है न?

पूज्य गुरुदेवश्री : काल का दोष कौन? काल क्या है? कोई चीज़ है? काल तुम्हारा हाथ पकड़ता है? श्रीमद् ने कहा है कि अपना पुरुषार्थ करते हो और यदि काल पकड़ने आवे तो मेरे पास आना। श्रीमद् राजचन्द्र कहते हैं। अपना चिदानन्द भगवान, जैसी तेरी पर की रुचि है—पुण्य की-पाप की, पर के विषय के भोग की जो रुचि का उल्लास है, वैसी रुचि स्वभाव सन्मुख कर और धर्म की पर्याय प्रगट न हो तो मेरे पास आना, ऐसी बात है। भगवान आत्मा चिदानन्दस्वरूप, ओहोहो! आनन्द का धाम.. जिसमें से आनन्द-अनन्त.. अनन्त.. निकालो तो भी आनन्द अन्दर से पूरा नहीं होता। आनन्द.. आनन्द..! आहा..हा..! स्वभाव सन्मुख होना, वही तेरा पुरुषार्थ है (-ऐसा) आगे कहेंगे। समझ में आया?

यह जीव,... तब यह जीव,... इस तरह वहाँ जब ऐसा होता है तब **यह जीव,...** ऐसा शब्द है न? वहाँ क्या करता है, कैसे.. जब व्यक्ति होती है, तब **सहज-शुद्ध-पारिणामिकभावलक्षण निज-परमात्मद्रव्य के,...** देखो! यह भाव आया। यह जीव स्वयं अपना आत्मा **सहज-शुद्ध-पारिणामिकभावलक्षण...** सहज अर्थात् स्वाभाविक, शुद्ध अर्थात् पवित्र, पारिणामिक अर्थात् किसी की अपेक्षा नहीं ऐसा। **पारिणामिक-भावलक्षण निज-परमात्मद्रव्य...** देखो! अपना परमात्मद्रव्य; पर परमात्मा नहीं। अरिहन्त और सिद्ध तो उनके परमात्मा, अपने नहीं। आहा..हा..! जीव, सहज.. शुद्ध.. स्वाभाविक.. पवित्र.. पारिणामिकभाव लक्षणवाले, जिसका पारिणामिक सहजभावलक्षण है - **ऐसे निज परमात्मद्रव्य,** उसका लक्ष्य, भगवान अपना परमात्मद्रव्य। देखो! निज परमात्मद्रव्य लिया है न? परमेश्वर का-पर के परमेश्वर का ध्यान करना, वह तो विकल्प है। समझ में आया?

निज परमात्मद्रव्य जो त्रिकाली भगवान है - ऐसे **परमात्मद्रव्य के, सम्यक्श्रद्धान...** देखो! यह पर्याय हुई; वह त्रिकाली द्रव्य हुआ। त्रिकाली भगवान आत्मा ध्रुव.. ध्रुव.. ध्रुव.. पारिणामिक लक्षणवाले निज तत्त्व भगवान का सम्यक्श्रद्धान, देखो! यहाँ देव-गुरु की श्रद्धा और नवतत्त्व की श्रद्धा, उस श्रद्धा को समकित नहीं कहते। समझ में आया? यह तो पहले धर्म की शुरुआत की बात करते हैं।

निज परमात्मद्रव्य,... द्रव्य अर्थात् वस्तु, सत्ता अस्तित्व वस्तु का स्वभाव त्रिकाल, इसका सम्यक्श्रद्धान... सम्यक्श्रद्धान अर्थात् उसके सन्मुख होकर अनुभव में श्रद्धा आना। आहा..हा..! सम्यक्श्रद्धान, उसका सम्यग्ज्ञान, देखो! शास्त्र का ज्ञान, ज्ञान नहीं है। समझ में आया? नवतत्त्व के भेद का ज्ञान भी ज्ञान नहीं है। छह द्रव्य का ज्ञान भी ज्ञान नहीं है। आहा..हा..! पूर्ण प्रभु ध्रुव चीज़, एक समय की पर्यायरहित चीज़ की श्रद्धा, वह श्रद्धा पर्याय है, यह द्रव्य त्रिकाली है। इसकी श्रद्धा। समझ में आया? इसका नाम सम्यग्दर्शन है। देखो! यह तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्। तत्त्वार्थश्रद्धान, व्यवहार तत्त्वार्थश्रद्धान, उस व्यवहार की बात यहाँ है नहीं। यहाँ तो परमार्थ की बात है। निज स्वरूप में आरूढ़ होकर... समझ में आया? अपना भगवान निज परमात्मद्रव्य / वस्तु की ओर के झुकाव से जो सम्यक्श्रद्धान हुआ, निर्विकल्प सम्यग्दर्शन हुआ। विकल्प तो नहीं और विकल्प का आश्रय नहीं, श्रद्धा के आश्रय में भगवान त्रिकाली द्रव्य है। समझ में आया?

और **ज्ञान...** सम्यग्ज्ञान। तीनों में लेना सम्यक्श्रद्धान, सम्यग्ज्ञान। निज परमात्मद्रव्य का ज्ञान। समझ में आया? उसका नाम ज्ञान कहते हैं। आहा..हा..! गजब बातें, भाई! निश्चय परम सत्य की बात है, हाँ! आठ-आठ वर्ष की बालिका भी सम्यग्दर्शन प्राप्त करती है तो इस प्रकार ही होता है। मेंढ़क, सुख के सागर पर झूलते हैं तो त्रिकाली निज द्रव्य परमात्मा का ज्ञान होता है। समझ में आया? दूसरे नौ तत्त्व का नाम भी न जाने, नाम भी न हो परन्तु निज परमात्मा का अन्दर में अनुभव करके ज्ञान हो, उसका नाम ज्ञान कहते हैं। आहा..हा..! गजब बात, भाई! **निज परमात्मद्रव्य के सम्यक्श्रद्धान..** यह पर्याय हुई। परमात्मद्रव्य यह वस्तु हुई।

सम्यग्ज्ञान-परमात्मद्रव्य का ज्ञान, अपना परमात्मा / वस्तु / ध्रुव का ज्ञान उस ओर झुकने से जो ज्ञान हुआ वह ज्ञान।

और **अनुचरण...** सम्यक् अनुचरणरूप... यह स्वरूप का अनुचरण करके स्थिरता जो हुई, जिसमें आनन्द और शान्ति की पर्याय उत्पन्न हो, उसका नाम अनुचरण अर्थात् चारित्र कहा जाता है। लो, यह चारित्र! पाँच महाव्रत और बारह व्रत वह तो विकल्प है, वह चारित्र नहीं, वह धर्म नहीं, वह धर्म की अवस्था / पर्याय नहीं। निज प्रभु परमात्मद्रव्य कहो या निज परमात्मा पूर्णानन्द ध्रुव प्रभु की श्रद्धा, उसका ज्ञान, उसका अनुचरण—उसमें द्रव्य को अनुसरण कर, अनुसरण कर स्थिर होना, रमना, वह चारित्र है।

मुमुक्षु : एक काल में तीनों?

पूज्य गुरुदेवश्री : एक काल में तीनों। समझ में आया? सम्यग्दर्शन में स्वरूपाचरण, अनुचरण ये तीनों एक साथ होते ही हैं। समझ में आया?

आगे कहेंगे, देखो! अभी तीन भाव में मोक्षमार्ग में अर्थात् उपशम में, सम्यक् उपशम में भी सम्यग्दर्शन का शुद्ध उपयोग है, उसमें भी शुद्धात्मा का आचरण है। आहाहा! उस पर्याय को तीन भाव में गिनने में आता है, तो उसका अर्थ क्या? देखो, यह कहते हैं, हों! उस **अनुचरणरूप पर्याय से परिणमता है;...** ऐसा पाठ है न? उसमें भी, घातक में भी पर्यायार्थिकनय से घातता था, कहा। अपनी पर्यायरूप से परिणमे आत्मा, शुद्ध भगवान आत्मा, आनन्द का धाम, उसे स्पर्श करके सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की पर्याय / अवस्था...

पहले यह परिणाम कहा था न ? यहाँ पहले परिणाम कहा था न भैया ! उस परिणाम को यहाँ पर्याय कहा है।

मोक्षमार्ग और मोक्ष के परिणाम से शून्य द्रव्य है-ऐसा पहले कहा था। आहाहा ! मोक्ष और मोक्ष का मार्ग, वह पर्याय है, अवस्था है, हालत है, दशा है। (उसे) परिणाम कहने में आता है। पर्याय कहो, परिणाम कहो, अवस्था कहो, हालत कहो, दशा कहो (सब एकार्थ है)। समझ में आया ? यह बात तो थोड़ी क्लास में तुम्हें सिखाते हैं न, लो। समझ में आया ? पहले क्लास में चिमनभाई यह बहुत सिखाते थे। पहले क्लास में बैठते हैं न यहाँ ! हम सुनते हैं, वहाँ किसी समय कि ठीक, भाषा सादी है।

मुमुक्षु : क्या सिखाते हैं ?

पूज्य गुरुदेवश्री : यह सिखाते हैं, गुण की पर्याय, वह गुण का कार्य (है)।

मुमुक्षु : अन्य का नहीं ?

पूज्य गुरुदेवश्री : हम सुनते हैं न सुबह पाँच-दस मिनिट, समय होता है न, हम तो घूमते हैं तो बात का ख्याल आ जाता है कि ठीक।

अपने में ज्ञानगुण है या नहीं ? है; तो ज्ञान का कार्य अपने से होता है या पर से होता है ? समझ में आया ?

मुमुक्षु : आप समझाओ महाराज ! समझाओ !

पूज्य गुरुदेवश्री : सम्यग्दर्शन कार्य है या अकार्य है ? (कार्य है) तो सम्यग्दर्शन किसका कार्य है ? अपना त्रिकाली श्रद्धागुण है, उसका वह कार्य है; वह पर का कार्य नहीं है। समझ में आया ? चारित्र कार्य है या नहीं ? चारित्र पर्याय कार्य है या नहीं ? (है) तो कार्य, किसका कारण है ? उसका कारण कौन है ? चारित्रगुण त्रिकाल, वह कारण है। गुण का वह परिणमन है या पर की पर्याय का परिणमन है ? समझ में आया ? यहाँ तो सादी भाषा में है। पहले बहुत आ गया है। क्लास में पहले बहुत (आ गया है)। यहाँ बहुत क्लास चलती थी न ? यहाँ तो तीसरे साल से (संवत् २००३ से) क्लास चलती है।

अनन्त गुण की पर्याय एक साथ होती है। अनन्त गुण की पर्याय एक साथ होती

है यह तो-तीन तो मोक्ष के मार्ग के लिये बताया है; बाकी एक द्रव्य में जितने गुण हैं, सब एक समय में अनन्त गुण की पर्यायरूप अंश निर्मलरूप परिणमन होता है। समझ में आया? 'सर्वगुणांश वह समकित' ऐसी श्रीमद् ने समकित की व्याख्या बाँधी है। अपने यहाँ है न? मोक्षमार्गप्रकाशक है वह कहाँ? मोक्षमार्गप्रकाशक (रहस्यपूर्ण चिट्ठी) वह वहाँ बताया था (जयपुर) आदर्शनगर में। आदर्शनगर गये थे, बहुत लोग थे, दस हजार लोग थे। समझे? वहाँ बताया था, हों! कहाँ है? देखो, चौथे गुणस्थानवर्ती आत्मा को ज्ञानादिगुण एकदेश प्रगट होते हैं, वहाँ बताया था। जयपुर (में) सब पण्डित लोग बैठे थे, बहुत पण्डित थे। बंशीधरजी थे, कैलाशचन्दजी थे, फूलचन्दजी थे, भागचन्दजी थे, बहुत थे। वह बाहर है न, आदर्शनगर के मन्दिर में, दस हजार लोग आये थे, बहुत लोग आये थे।

देखो, समकित क्या कहते हैं, समकित? चौथे गुणस्थानवर्ती आत्मा को.. यह तो इसमें गुजराती है। ज्ञानादिगुण एकदेश प्रगट होते हैं। जितने गुण हैं, वह एक अंश सर्व एक समय की पर्याय में व्यक्त/ प्रगट होते हैं। यहाँ तो मोक्षमार्ग (का वर्णन है), इसलिए तीन पर्याय की बात करते हैं। समझ में आया? वह चिट्ठी है न? रहस्यपूर्ण चिट्ठी, टोडरमलजी की रहस्यपूर्ण चिट्ठी का हमने गुजराती लिया है। यह तो गुजराती है, देखो! क्या कहा? सम्यग्दर्शन की पर्याय, सम्यग्ज्ञान की पर्याय, चारित्र की पर्याय के साथ आनन्द की पर्याय, वीर्य की पर्याय, अनन्त गुण की एक समय में (है), जितने गुण आत्मा में हैं, उसको जहाँ पकड़ लिया तो सब गुण की पर्याय एक समय में अंशतः प्रगट होती है।

श्रीमद् ने ऐसा वचन लिया है, अपने वहाँ स्वाध्यायमन्दिर में लिखा है 'सर्वगुणांश वह समकित'। उस दरवाजे के ऊपर स्वाध्यायमन्दिर के कमरे में ऊपर (लिखा है)। 'सर्वगुणांश वह समकित', उसका अर्थ यह (कि) सब ज्ञानादि गुण। जितने आत्मा में ज्ञान, आनन्द आदि वीर्य, स्वच्छता, प्रभुता, जीवत्वशक्ति... समझ में आया? कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान आदि शक्ति अनन्त हैं। रात्रि को थोड़ा कहा था। कितनी संख्या है?

मुमुक्षु : चालीस-पचास गिनने में आयी।

पूज्य गुरुदेवश्री : गिनने में आयी तो क्या, सब गिन सकते हैं-कह सकते हैं?

मुमुक्षु : दो सौ-चार सौ तो आप बताओ।

पूज्य गुरुदेवश्री : आचार्य कहते हैं, कितने गुण हैं, सब समझ लेना। एक भगवान आत्मा वस्तु है, कितनी संख्या में गुण हैं, वह रात्रि को कहा था कि छह माह और आठ समय में छह सौ आठ सिद्ध होते हैं। क्या? छह महीने और आठ समय में छह सौ आठ सिद्ध परमात्मा होते हैं - मनुष्य क्षेत्र में से (होते हैं)। यहाँ नहीं है तो महाविदेहक्षेत्र में से तो अभी तो होते हैं। शाश्वत् धाराप्रवाह चालू है। ऐसे छह माह और आठ समय में छह सौ आठ मुक्त परमात्मा होते हैं, तो ये अनन्त-अनन्त पुद्गल परावर्तन हुआ, उसकी-सिद्ध की जो संख्या हुई, उससे अनन्तगुने एक निगोद के एक शरीर में अनन्त जीव हैं। समझ में आया? ऐसा सारा सूक्ष्म निगोद अभी लोक में पड़ा है। सिद्ध भगवान विराजते हैं, वहाँ भी निगोद है। किसी ने अभी पूछा था, सिद्ध भगवान विराजते हैं, वहाँ निगोद है। वहाँ भी निगोद है, बड़ा संसार वहाँ पड़ा है। उनकी (सिद्धों की) पर्याय में संसार नहीं, वहाँ निगोद के जीव में संसार है। समझ में आया? एक क्षेत्र में पड़ा है - जहाँ सिद्ध भगवान रहते हैं, वहाँ ही निगोदिया रहते हैं। संसारी-महाघोर अनन्त संसारी प्राणी। क्या करे क्षेत्र में रहकर?

मुमुक्षु : सिद्धशिला पर ।

पूज्य गुरुदेवश्री : सिद्धशिला पर। सिद्धशिला वह तो नीचे रह गयी। जहाँ सिद्ध विराजते हैं, वहाँ निगोद जीव है। सिद्ध के पेट में।

मुमुक्षु : सिद्ध के पेट में...

पूज्य गुरुदेवश्री : पेट में समझे? आत्मा है या नहीं इतना? असंख्य प्रदेशी आनन्दकन्द शरीर-अवगाह व्यापक प्रमाण अपना स्वरूप भिन्न, उसके असंख्य प्रदेश में अनन्त निगोद के जीव वहाँ पड़े हैं। क्या करे? निगोद, निगोद में है।

मुमुक्षु : परन्तु कहते हैं महाराज! कि सिद्धशिला पर निगोदिया जीव है, उनको वहाँ सुख होगा न?

पूज्य गुरुदेवश्री : वह तो कहते हैं दु:खी है-महादु:खी है। अनन्त भव का करनेवाला जीव वहाँ है, उसका गुण-द्रव्य अलग, वह द्रव्य अलग।

वह कहते थे एक प्राणी कि भाई! तुम चक्रवर्ती को मिले? कि हाँ,—कब? कि हमारे केस चला था, बड़े गुनाह का, तब राज्य में चक्रवर्ती आया था, तब देखा था। वह

पिंजरा होता है न, तहोमतदार का पिंजरा होता है न ? तहोमतदार को पिंजरें में खड़ा रखते हैं। साक्षी ले तब खड़ा रखते हैं। खड़ा रखकर पूछते हैं। समझ में आया ?

हमारे भी ऐसा हुआ था न ? ६३ के साल में हमारे ऊपर मिथ्या अपराध आया था। सत्रह वर्ष की उम्र १ और ७=१७ (संवत्) ६३ के साल, अफीम का केस आया था। हमारे पर अत्यन्त झूठा-अत्यन्त झूठा-अत्यन्त झूठा सौ प्रतिशत झूठा, परन्तु हमारे पास सौ प्रतिशत अत्यन्त झूठा केस। हम दुकान पर थे, हम दुकान पर थे तो वह लेने आते हैं न ? क्या कहते हैं ? बक्शीश। बक्शीश लेने आये थे तो सबको देते थे। हम किसी को एक रुपया, किसी को आठ आना (देते थे) दुकान देते थे, ६३ के साल की बात है - संवत् १९६३। तो एक ओपियम आया, ओपियम (यूरोपियन) अफीम के (आवकारी के एक्साइजवाले)। वह कहने लगा एक रुपया लूँगा। मैंने कहा - तुम्हारे हमारे कुछ सम्बन्ध है ? हम तो व्यापारी हैं तो व्यापारी के साथ पोस्टमैन, मास्टर के साथ हमें सम्बन्ध है। तुम्हारे साथ हमें क्या सम्बन्ध है ? वह कहे - रुपया लूँगा। मैंने कहा आठ आना। यह बड़ा विवाद, फिर बड़ा विवाद हुआ। सवा महीने केस चला, खर्च हुआ, बहुत विवाद हुआ। अंग्रेज था। बड़ोदरा का बड़ा (जज था) ६३ के साल में एक महीने का तीन हजार रुपये वेतन था ६३ के साल में, हों !

हमें तीन घण्टे (कोर्ट में) रहना पड़ा, उसने देखा तो.. ओहो ! यह तो बनिया, यह तो गुनहगार है ही नहीं। पिंजरे में खड़ा नहीं रखना, बाहर खड़ा रखो। जवाब दो, झूठा केस है। हम तो बनिया हैं, हमारा मुँह तो देखे न कि हम तो बनिया.. हमारे पिताजी थे, वे तो बनिया हैं अफीम का गुनाह कैसा ? गोरा, हों ! कारपून, नहीं, पिंजड़े में नहीं, खुले रखो। पूछो, जवाब देगा। मुझे कोर्ट में तीन घण्टे जवाब देना पड़ा था। सत्रह वर्ष की उम्र में। हमारे पिताजी थे, हमारे बड़े भाई थे। क्यों कानजी ! क्या हुआ ? क्या होगा, हमें तो कुछ डर-बर है नहीं। सच बात थी, वह कह दी। उसे भी चोट लग गयी थी कि ओहो ! बात तो सत्य लगती है, समझ में आया ? तो दूसरे को पांजरापोल में रखते हैं। पांजरापोल क्या कहते हैं ? पिंजरे में (कठघरे में) पिंजरे में रखते हैं। समझ में आया ? इसी प्रकार जहाँ सिद्ध भगवान हैं, वहाँ पिंजरे में निगोद है। पिंजरा समझते हैं न ! पिंजरे में निगोद है।

यहाँ तो कहना है सिद्ध की संख्या से संसारी जीव की संख्या अनन्तगुनी है और उससे परमाणु अनन्तगुने हैं। यह परमाणु रजकण-पॉइन्ट (अंगुली दिखाकर) कहा। इसके टुकड़े करो तो अनन्त रजकण और परमाणु से तीन काल के समय अनन्त गुने हैं और तीन काल के समय से आकाश (के प्रदेश अनन्तगुने हैं) जो आकाश है न? व्यापक, व्यापक व्यापक तो आकाश के प्रदेश अनन्तगुने हैं और उससे अनन्तगुने एक जीव के गुण हैं। समझ में आया? आत्मा के पास इतनी संख्या-पूँजी है। यहाँ तुम्हारे पास दो-पाँच-दस करोड़ हो जाये वहाँ तो कहे। आहाहा! पैसावाला। धूल में भी नहीं है, सुन न! ऐई भगवानजीभाई!

मुमुक्षु : इनके पास कहाँ रुपये हैं?

पूज्य गुरुदेवश्री : इनके पास पचास-साठ लाख तो है, उसके पास करोड़ से ऊपर और दूसरे होंगे। चलो न! धूल में भी नहीं है। ऐ! ये सब बैठे, शोभालालजी और.. परन्तु इतना पैसा है? सिद्ध के गुण अनन्त-द्रव्य के गुण जो अनन्त हैं उतना पैसा है तुम्हारे पास? ऐसे आत्मा में अनन्त गुण हैं। अनन्तानन्त.. अनन्तानन्त (गुण हैं)। जहाँ उसकी अन्तर्मुख होकर प्रतीति हुई, अनन्त गुण की शक्ति की व्यक्तता एक समय में प्रगट होती है। आहाहा! ठीक! एक भी गुण शक्ति में से व्यक्त न हो ऐसा नहीं बनता। समझ में आया? आहाहा! ऐसा भगवान!

उसकी तथा तेरहवें गुणस्थानवर्ती आत्मा के ज्ञानादि गुण सर्वदेश.. भाई! दोनों लिया है न भाई! टोडरमलजी ने लिया है केवलज्ञानी को ज्ञानादि गुण सर्वदेश प्रगट हुए हैं। परमात्मा अरिहन्त को सब गुण पूर्ण व्यक्त हो गये हैं। चौथे गुणस्थान में एक अंश-एकदेश-एक भाग—सब गुण का एक भाग में, एकदेश में पवित्रता प्रगट हुई है परन्तु यहाँ तो मोक्षमार्ग की तीन पर्याय की बात कहना है परन्तु तीन के साथ अनन्त पर्याय प्रगट होती है। समझ में आया? उस समय वहाँ-जयपुर में कहा था।

यहाँ कहते हैं **पर्याय से परिणमता है;...** यहाँ तो तीन की बात लेना है न? परन्तु एक ही साथ अनन्त.. अनन्त.. अनन्त.. यह गुण की संख्या कही, उन सबकी पवित्र पर्याय चौथे गुणस्थान से प्रगट हो जाती है। समझ में आया? इसके पास कितनी लक्ष्मी है!

मुमुक्षु : चौथे (गुणस्थान से) खजाना खुल गया।

पूज्य गुरुदेवश्री : चौथे से खजाना खुल गया है। अज्ञानी को सारा खजाना बन्द है क्योंकि राग और आत्मा-पर्याय में एकत्वबुद्धि करनेवाला मिथ्यादृष्टि जीव, उसे सारा खजाना बन्द है। जहाँ सम्यग्दर्शन हुआ, चाबी खुल गयी। अब अन्दर से निकालते रहो। समझ में आया? ऐसी पर्याय है वह तो, ऐसी पर्याय का परिणमन हुआ। समझ में आया? आहाहा!

निज-परमात्मद्रव्य के, सम्यक्श्रद्धान-ज्ञान-अनुचरणरूप पर्याय से परिणमता है;... देखो! पर्याय से परिणमता है - ऐसा लिया। ऐसी अवस्था का परिणमन-अवस्था का (परिणमन) होता है। **वह परिणमन...** अब यहाँ कहते हैं, वह परिणमन जो धर्म का हुआ, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की पर्याय / परिणमन / अवस्था प्रगट हुई तो किस भाव से हुई? उसे आगम क्या कहता है और अध्यात्म क्या कहता है? **वह परिणमन आगमभाषा से 'औपशमिक',...** देखो! आचार्य यह स्पष्टीकरण करते हैं कि उपशम समकित में भी शुद्धपरिणमन प्रगट हुआ है और उस परिणमन को यहाँ शुद्ध उपयोग भी कहेंगे। समझ में आया? है न यहाँ अन्त में? **'शुद्धात्माभिमुख परिणाम', 'शुद्धोपयोग' इत्यादि..** (अध्यात्मभाषा में) इस उपशमभाव में भी शुद्धोपयोग है - ऐसा यहाँ आचार्य सिद्ध करते हैं।

(वह परिणमन आगमभाषा से) **'औपशमिक', 'क्षायोपशमिक' तथा 'क्षायिक'- ऐसे भावत्रय कहा जाता है,...** किसे? जो अपने निज परमात्मा ध्रुवस्वरूप भगवान की श्रद्धा-ज्ञान और रमणता, यह जो तीन पर्याय हुई, वह किस भाव से है? कि उसको **आगमभाषा से 'औपशमिक', 'क्षायोपशमिक' तथा 'क्षायिक' - ऐसे भावत्रय कहा जाता है,...** आहा..हा..! उन्होंने लिखा है न भाई! क्योंकि आचार्य का कहना शुद्ध उपयोग तो लगता है। तथापि स्वयं का दूसरा पढ़ा, ऐसा अर्थ दूसरी जगह भी एक-समयसार में है। यहाँ से मरकर सम्यग्दृष्टि जीव है, वहाँ तो समकित की भावना छोड़ता नहीं। शुद्धभावना छोड़ता नहीं। स्वर्ग में रहता है और फिर यहाँ आवे तब समवसरण, तीर्थङ्कर.. कौन सी गाथा है? यह समयसार - १३०-१३१ जयसेनाचार्य की टीका - वीतराग स्वसंवेदन भेदज्ञानी जीव, धर्मी जीव रागरहित अपने श्रद्धा-ज्ञान और चारित्र प्रगट हुआ, वह जीव-शुद्धात्मभावनारूप से परिणाम करोति-शुद्धात्मा कर्ता-कर्म है न? कर्ता-कर्म की गाथा है।

१३०-१३१। शुद्धात्मभावना यह पर्याय कही है, वह। सम्यग्दर्शन-ज्ञान, वह शुद्धात्मभावना, परिणाम करोति-सपरिणामः सर्वोपि ज्ञानमयो भवति-उसमें राग का विकल्प नहीं। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ज्ञानमय है। **कथेव ज्ञानमय परिणामः एव संसार सिद्धित्वा देवेन्द्र-लोकान्तिक महादेवो पूजवा घटिकात्वं मति-श्रुत-अवधिरूपं ज्ञानमय भावं पर्याय लभन्ते तहां-विमानं परिवार आदि विभूति जीर्ण परिणमनेव गत्व गणत्री पंच महाव्रते गत्वा।** सम्यग्दृष्टि महाविदेह में स्वर्ग में (से) जाते हैं। पश्चात् अपनी ऋद्धि को त्रणमात्र-सड़ा हुआ तिनका देखते हैं। चाहे वैमानिक पहला देवलोक, दूसरा देवलोक गया तो **किम पश्यति महाविदेह गत्वा तद् इदम् समोसरणं** ओहो! ये भगवान विराजते हैं। जो सुना था, प्रत्यक्ष देखा। भगवान के पास जाते हैं न? दूसरा वाक्य - अपने को दूसरा वाक्य लेना है - ये तो भेदाभेद रत्नत्रय आराधक हैं। परिणमते गणधरदेव समवसरण में देखे कि ओहो! यह गणधर और मुनि जो देखे थे-भेद-अभेद रत्नत्रयरूप परिणत (वे) समवसरण में विराजते हैं।

यहाँ दूसरी बात कही है। परमागम में **शुरुयेते दृष्टवा प्रत्यक्षेण..** आगम से सुना था वह समकिती वहाँ जाते हैं वह प्रत्यक्ष देखा। **विशेष दृढ़मतिभुत्वा** - प्रत्यक्ष देखने से **सम्पूर्ण चतुर्थ गुणस्थान में शुद्धभावना अपरित्यज्यं**-यहाँ वजन है भाई! वहाँ फिर उसने कहा शुद्धभावना अर्थात् शुद्धउपयोग लेना, ऐसा नहीं, अमुक नहीं - ऐसी गड़बड़ की है। अरे! क्या कहते हैं? समझ में आया? '**शुद्धभावना अपरित्यज्य निरन्तर धर्मध्यानेन देवलोके कालं गमियत्वा।**' बस फिर मनुष्यभव होकर मोक्ष जायेंगे। समझ में आया? जयसेनाचार्य की टीका, १३०-१३१ गाथा समयसार, जयसेनाचार्य की टीका। समझ में आया?

क्या कहते हैं, देखो! यह जो आत्मा में अपना ध्रुवस्वभाव, उसके सन्मुख होकर जो सम्यग्दर्शन ज्ञान धर्म की पर्याय-मोक्ष के मार्ग की पर्याय उत्पन्न हुई, उसे आगमभाषा से क्या भाव कहना? वह उपशमभाव भी कहो, क्षयोपशम भी हो और क्षायिक—ऐसे भावत्रय कहा जाता है। मोक्षमार्ग की पर्याय को उपशमभाव भी कहते हैं, क्षयोपशमभाव भी कहते हैं और क्षायिकभाव भी कहते हैं। उपशमभाव समकित चौथे से ग्यारहवें तक होता है, चारित्र-उपशमचारित्र ग्यारहवें में होता है। समझ में आया? और क्षयोपशम

समकित चौथे से सातवें में रहता है और क्षायिक समकित चौथे से सादि-अनन्त रहता है। समझ में आया?

यहाँ तीन भाव गिनने में आये हैं न? तो जो उपशमभाव समकित है, वह अन्तर्मुहूर्त रहता है परन्तु है वह भी शुद्ध उपयोगरूपी भाव। आहाहा! समझ में आया? और क्षयोपशमभाव हो तो भी क्षयोपशम चौथे से सातवें तक रहता है समकित। फिर आठवें से क्षायिक हो जाये या उपशम हो जाये। वह भी क्षयोपशम समकित को भी यहाँ आत्मा का परिणाम उपयोग-शुद्धउपयोग कहा गया है और क्षायिक समकित चौथे, आत्मा जिसमें... सबेरे कहा था कलंक नहीं, ऐसा भगवान शुद्ध उपयोगस्वभावी, द्रव्य ही ऐसा है। ऐसे द्रव्य का भान हुआ तो शुद्ध उपयोगरूपी परिणाम को उपशम कहो, क्षयोपशम कहो, भूमिका प्रमाण, और क्षायिक—तीन भाव को भावत्रय कहा जाता है। समझ में आया?

अध्यात्मभाषा से... आगमभाषा में तीन (कहा)। **'शुद्धात्माभिमुख परिणाम'...** शुद्ध द्रव्यस्वभाव भगवान के अभिमुख-सन्मुख परिणाम और **'शुद्धोपयोग' इत्यादि पर्यायसंज्ञा पाता है।** इत्यादि मोक्षमार्ग की पर्याय में, ये नाम इत्यादि ऐसे द्रव्यसंग्रह में ६५ नाम आदि लिये हैं। ६५ नाम, वह सबेरे आयेगा।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)

भेद-विज्ञानी का उल्लास

जो चैतन्य का लक्षण नहीं है — ऐसी समस्त बन्धभाव की वृत्तियाँ मुझसे भिन्न हैं; इस प्रकार बन्धभाव से भिन्न स्वभाव का निर्णय करने पर, चैतन्य को उस बन्धभाव की वृत्तियों का आधार नहीं रहता, अकेले आत्मा का ही आधार रहता है। ऐसे स्वाश्रयपने की स्वीकृति में चैतन्य का अनन्त वीर्य आया है।

अपनी प्रज्ञाशक्ति के द्वारा जिसने बन्धरहित स्वभाव का निर्णय किया, उसे स्वभाव की रुचि, उत्साह और प्रमोद आता है कि अहो! यह चैतन्यस्वभाव स्वयं भवरहित है, मैंने उसका आश्रय किया, इससे अब मेरे भव का अन्त निकट आ गया है और मुक्तिदशा की नौबत बज रही है। अपने निर्णय से जो चैतन्यस्वभाव में निःशङ्कता करे, उसे चैतन्य प्रदेशों में उल्लास होता है और अल्प काल में मुक्तदशा होती है।

—पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी